# भगवान बुद्ध के त्रिकायः एक समीक्षा

*प्रो॰ पी॰ जी॰ योगी*

पालि-निकाय में त्रिकाय-वाद नहीं है,किन्तु उसमें बुद्ध के तीन कायो में विशेष किया गयो है। चातुर्महाभौतिक काय,मनोमय काय,और धर्म काय। प्रथम काय पूति काय है, यह जरायुज है। शाकयमुनि ने माता की कुक्षिमें इसी काय को धरणा किया था। पालि में बुद्ध के निमार्ण काय का उल्लेखन नहीं है। किन्तु चातुर्महाभौतिक काय के विपक्ष में एक मनो मय काय का भी उल्लेख है। संयुक्त पृ 282, दीध 2,पृ 109। सर्वास्ति वाद की परिभाषा में बुद्ध में नैर्माणिकी और परिणामिकी ऋद्धि थी। वह अपने सदृश अन्यरुप निर्मित कर कसते थे और अपने काय का परिदापत्र भी कर सकते थे। यथा ब्रह्म का काय अधर देवो के असदृश है,। वह अभिनिर्मित शरीर से उनको दर्शन देते हैं (दीध 2, पृ 212 कोश 3, पृ 269) /इसलिए अवतंसक में बुद्धकी तुलना ब्रह्म से करते हैं। पालि निकाय में रुपी देवों को मनोमय कहा गया है। -मज्झिम 1,410, विनय 2, 1-85) ।में कहा है कि कोलियपुत्र कालकर मनोमय काय में उत्पन्न हुआ है। बाह्यौ, प्रत्यय के विना मनस् से निष्पन्न निवृत्त-काय मनोमय-काय है। विशुद्धि-मार्ग के अनुसार (पृ 405) यह अधिष्ठान मन से निर्मित है। सर्वास्ति वादी भी मनोंमय काय के देवों का रुपावचर मानता है। सौत्रान्तिक के मत से यह रुप है आरुप्य दोनों के हैं। योगा चार के अनुसार आठवी भूमि में काय मनो मय होता है, इसमें मन का वेग होता है, यह मन की तरह शीघ्रगमन करता है और इसकी गति अप्रतिहत होती है। सब श्रावक मनोमय कायधारण कर कसते हैं। (योगशास्त्र 80) ।मनो मय काय के 10 प्रकार होते हैं। कुछ के अनुसार यह काय मनः स्वभाव है, दूसरों के अनुसार इस काय की उत्पत्ति इच्छानुसार होती है, पूर्वकाय का परिणाम मात्र होता है। अभिनव काय की उत्पत्ति नहीं होती।

बुद्ध का यर्थाथ काय रुप-काय नहीं है, जिसके धातु-गर्भ की पूजा उपासना करते हैं किन्तु धर्म (धर्म विनय) यथार्थ काय है। धर्म-काय प्रवचन काय है। शाक्य-पुत्रीय-भिक्षु इसीधर्म काय से

उत्पन्न हुए हैं। "मैं भगवत् का औरस पुत्र हूँ, धर्म से उत्पन्न हूँ, धर्म का दायाद हूँ" (दीध, 3,पृ. 84, इतिवुत्तक, पृ 101) ।दूसरा कारण यह है कि भगवान धर्म भूत हैं, ब्रह्म भूत है, धर्म-काय भी हैं। (दीध, 3, 84, मज्झिम, उ, पृ, 195। इसी प्रकार कहते हैं, प्रज्ञापारमिता धर्म-काय है।, तथागत काय है। जो प्रतीत्य समुत्पाद का दर्शन करता है वह धर्म-काय का दर्शन करता है। प्रज्ञापारमितास्तोत्र में आचार्य नागार्जून कहते हैं-जो तुझे भाव से देखता है, वह तथागत को देखता है। शान्तिदेव बोधियर्यावतार के आरंम्भ में सुगतात्मज और धर्म-काय की भी बन्दना करते हैं, (पृ:3)।।,।।

स्थाविर-वाद से महा-यान में आते-आते बुद्ध में पूर्ण अलौकिक-गुण आ जाते हैं। अब बुद्ध को केवल अलौकिक-गुण-व्यूह-सम्पत्ति से समन्वागत ही नहीं किया गया,पर उनका व्यक्तित्व ही नष्ट कर दिया गया। बुद्ध अजन्मा, प्रपञ्च-विमुक्त,अव्यय और आकाश प्रतिसम हो गये। स्थविर-वादियों के अनुसार भगवान् बुद्ध लोकोत्तर थे। बुद्ध स्वंय कहा था कि मैं लोक में ज्येष्ठ और श्रेष्ठ हूँ और सब सत्वों में अनुत्तर हूँ। एक बार द्रोण ब्राह्मण बुद्ध के पादों में सर्वाकार परिपूर्ण चक्रों को देखकर चकित हुआ। उसने बुद्ध से पूछा कि आप देव हैं,यक्ष हैं,गन्धर्व हैं, कया हैं? भगवान् ने कहा-मैं इनमें से कोई नहीं हूँ। द्रोण बोला फिर कया आप मनुष्य हैं, बुद्ध ने उत्तर दिया-: मैं मनुष्य भी नहीं हूँ,मैं बुद्ध हूँ जिससे देवोत्पत्ति होती है, जिससे यक्षत्व या गन्धर्वत्व की प्राप्ति होही है। सब आसवों का मैंने नाश किया है। हे ब्राह्मण! जिस प्रकार पुण्डरीक जल से लिप्त नहीं होता,उसी प्रकार मैं लोक से उपलिप्त नहीं होता। दीध निकाय के अनुसार बोधिसत्व की यह धर्मता है कि जब वह तुषितकाय से च्युत हो माता की कुक्षि में अबक्रान्त होते हैं,तब सब लोकों में अप्रमाण अवभास का प्रादुर्भाव होता है। यह अवभास देवताओं के तेज को भी अभिभूत कर देता है। लोकों के बीच जहाँ अन्धकार ही अन्धकार है, जहाँ चन्द्रमा और सूर्य ऐसे महानुभावों की भी आभा नहीं पहूँचती, वहाँ भी अप्रमाण-अवभास का प्रादुभीव होता है। बोधिसत्व महापुरुषों के बत्तीस लक्षणों से और अस्सी अनुव्यञ्जनों से समन्वागत होते हैं। (दीधनिकाय,भाग 2, पृष्ठ 16)। एक स्थालपर भगवान् आनन्द से कहते हैं कि दो काल में तथागत का छवि वर्ण परिशुद्ध होता है जिसरात्रि को भगवान् सम्यक् सम्बोधिप्राप्त करते हैं। (2) जिस रात्रि को भगवान् अनुपधि शेष निवार्ण में प्रवेश करते हैं (दीधनिकामा,भाग 3,पृष्ठ 134)। पालिनिकाय के अनुसार जब बोधिसत्व ने गर्भावक्रान्ति की, तब मानुष और अमानुष परस्पर हिंसा का भाव नहीं रखते थे और सब सत्व दृष्ट और तुष्ट थे। भगवान् के यह सब अद्भुत धर्म त्रिपिटक में वर्णित हैं। जहाँ दूसरे बुद्ध के बताए हुए भार्ग का अनुसरण कर अर्हत् अवस्था को प्राप्त करते हैं और उनको मार्ग का अन्वेषण नहीं करना पड़ता वहाँ बुद्ध स्वंय अपने उध्योग से निर्माण-मार्ग का उद्घाटन करते है। यही उनकी विशेषता है। परिनिर्वाण के पूर्व स्वंय बुद्ध ने अपने शिष्य आनन्द से कहा था: हे आनन्द/:-तुममें से किसी का विचार यह हो सकता है कि शास्ता का प्रवचन अतीत हो गया, अब हमारा कोई शास्ता नहीं है। पर ऐसा विचार उचित नहीं है। जिस धर्म और विनय का मैंने तुमको उपदेश किया है मेरे पीछे वह तुहारा शास्ता हो। बुद्ध ने यह भी कहा है कि जो धर्म को देखता है वह मुझको देखता है और जो मुझ को देखता है वह धर्म को देखता है। इसका यही अर्थ है कि जिसने धर्म का तत्व समझ लिया है,उसी ने बास्तव में बुद्ध का दर्शन किया है। बुद्ध के निवीण के पक्ष्चात् यही धर्म शास्ता का कार्य करता है। बुद्ध का बुद्धत्व इसी में है कि, उन्हों ने दुख की अत्यन्त-निवृत्ति के लिए धर्म का उपदेश किया। बुद्ध केवल पथ प्रदर्शक हैं, उनके बताये हुए धर्म की शरण में जाने से ही निर्वाण का अधिगम होता है।

बुद्ध कहते है:"हे आनन्द-: तुम अपने लिये स्वयं दीपक हो, धर्म की शरण में जाओ, किसी दूसरे का आश्रय न खोजो "बुद्ध के निवीण के पक्ष्चात् श्रद्धालु श्रावक बुद्ध को देवाति देव मानने लगे

और यह मानने लगेकि बुद्ध सहस्र-कोटि कल्प से हैं और उनका आयु प्रमाण अनन्त-कल्प का है। बुद्ध लोक के पिता और स्वयंभू हो गये, जो सदा गृधकूट पर्वत पर निवास करते हैं। और जब धर्म का उपदेश करना चाहते हैं, तब भ्रूमध्य के उर्णाकोश सेएक रश्मि प्रसृत करते हैं, जिस से अट्ठारह-सहस्र बुद्ध क्षेत्र अवभासित होते हैं। बुद्धों की संख्या भी अनन्त होगयी। महायान सूत्रों में इस प्रकार के विचार पाये जाते हैं। सद्धर्मपुण्डरीक में भगवान् बुद्ध कहते हैं कि सहस्र कोटि कल्प व्यतित हुए, जिसका कि प्रमाण नहीं है,जब मैंने सम्यक् ज्ञान प्राप्त किया,और मैं नित्य धर्म का उपदेश करता हूँ। भगवान् कहते हैं कि मैं सत्वों की शिक्षा के लिए उपाय का निदर्शन करता हूँ और उनको निर्वाण भूमि का दर्शन करता हूँ। "मैं स्वं निर्वाण में प्रवेश नहीं करता और निरन्तर धर्म का प्रकाश करता रहता हूँ।

पर विमूढ़ चित्त मनुष्य मुझको नहीं देखते। यह समझकर कि मेरा परिनिर्वाण हो गया है, वे मेरे धातु की विविधप्रकार से पूजा करते हैं, पर मुझ को नहीं देखते। जब सरल और मृदु सत्व शरीर का उत्सर्ग करते हैं, तब मैं श्रावक-संघ को एकत्र कर गृधकूट-पर्वत पर उनको अपना दर्शन कराता हूँ, और उनसे कहता हूँ, कि मेरा उस समय निर्वाण नहीं हुआ था, यह मेरा केवल उपाय कौशल था, मैं जीवलोक में बार बार आता हूँ। प्रज्ञापारमिता सूत्र के भाष्य में आचार्य नागार्जून कहते हैं कि तथागत सदा धर्म का उपदेश करते रहते हैं, पर सत्व अपने पाप कर्म के कारण उनके उपदेश को नहीं सूनते और न उनकी आभाको देखते हैं, जैसे बहरे बज्र के निनाद को नहीं सुनते और अन्धे सूर्य की ज्योति को नहीं देखते। ललित विस्तर में एक स्थल पर आनन्द और बुद्ध का संवाद है। भगवान् आनन्द से कहते हैं कि:- "भविष्य काल में कुछ भिक्षु अभिमानि और उद्धत होगे। वे बोधिसत्व की गर्भावक्रान्ति परिशुद्धि में विश्वास न करेगें। वे कहेंगे कि यह किस प्रकार संभव है कि बोधिसत्व माता की कुक्षि से बाहर आते हुए गर्भमल से उपलिप्त नहीं हुए। वे नहीं जानते कि तथागत देवतुल्य हैं और मनुष्य मात्र हैं, और उनके स्थान की पूर्ति करने में समर्थ नहीं हैं। उनको समझना चाहिये कि हमलोग भगवान् की इयत्ता या प्रमाण को नहीं जान सकते वह अचिन्त्य है" ।करण्डक व्यूह में अवलोकितेश्वर के गुणों का वर्णन है। इस ग्रन्थ में लिखा है कि आरम्भ में आदि बुद्ध का उदय हुआ। इनको स्वयंभू और आदिनाथ भी कहा है। इन्हों ने ध्यान द्वारा संसार की सृष्टि की। अवलोकितेश्वर की उत्पत्ति आदि बुद्ध से हुई और उन्होंने सृष्टि की रचना में आदि बुद्ध की सहायता की। अवलोकितेश्वर की आँखो से सूर्य और चन्द्रमा की सृष्टि हुई मस्तक से महेश्वर, स्कन्ध से ब्रह्मा, औ हृदय से नारायण उत्पन्न हुए।

सुखावति-व्यूह में लिखा है कि यदि तथागत चाहें तो एक-पिण्ड़ पात कर कल्पशतसहस्र तक और इससे भी अधिक कालतक रह सकते हैं, और तिस पर भी उनकी इन्द्रियाँ नष्ट न होगी, उनका मुख विवर्ण न होगा, और उनके छविवर्ण में परिवर्तन न होगा। यह बुद्ध का लोकोत्तर भाव है। सुखावति लोक में अमिताभ-तथागत निवास करते हैं, अमिताभ की प्रतिमा अनुपम है, उनका प्रमाण नहीं है। इसी कारण उनको 'अमिताभ' 'अमितप्रभ' आदि नाम से संकीर्तित करते हैं। यदि तथागत कल्प भर अमिताभ के कर्म का प्रभा से आरंभ कर वर्णन करें तो उनकी प्रभा का गुणपर्यन्त अधिगत न करे सकें, क्योंकि अमिताभकी प्रभा,गुण,विभूति अप्रमेय,असंख्येय,अचिन्त्य, और अपर्यन्त है। अमिताभ का श्रावक संघ भी अनन्त और अपर्यन्त है। अमिताभ की आयु अपरिमित है। अतः इन्हें 'अमितायु' भी कहते हैं। साम्प्रत कल्पगणना के अनुसार इस लोक धातु में अमितायु को सम्बोधि प्राप्त किये दश कल्प व्यतीत हो चुके हैं। समाधिराज में लिखा है कि बुद्ध का ध्यान करते हुए श्रावक को किसी रुपकाय का ध्यान न करना चाहिये। क्योंकि बुद्ध का धर्म-शरीर है की उत्पत्ति नहीं होती, वह बिना कारण के ही कार्य हैं, वह सबके आदिकारण हैं, उनका आरंम्भ नहीं है। सुवर्णप्रभा सूत्र में भी बतलाया है कि बुद्ध का जन्म नहीं होता। उनका

सच्चाशरीर "धर्म काय" या धर्म-धातु है। सुखवतीव्यूह में बुद्ध को "धर्म स्वामी" और बुद्धचरित में "धर्मराज" कहा है। महायानश्रद्धोत्पाद शास्त्रा का कहना है कि बुद्ध ने निर्वाण में प्रवेश नहीं किया,उनका काय शाश्वत है।

स्थविरवादियों ने महायानियों के लोकोत्तरवादका विरोध किया, जैसा कथावत्थु से स्पष्ट है। कथावत्थु के अठारहवें वर्ग में इसकी स्थापना की गई है कि बुद्ध मनुष्य लोक में थे, इस पूर्व-पक्ष का खण्डन किया गया है कि उनकी स्थिति मनुष्य लोक में न थी। पूर्व पक्ष का खण्डन करते हुए पिटक ग्रन्थों से बुद्ध वचन उद्धृत कर यह दिखाया गया है कि बुद्ध के संवादों से ही यह सिद्ध है कि बुद्ध की स्थिति मनुष्य लोक में थी। बुद्ध लोक में उत्पन्न हुए थे, सम्यक् सम्बोधि प्राप्त कर उन्होंने धर्म-चक्र का प्रवर्तन किया था और उनका परि-निर्वाण हुआ था। इस पूर्व पक्ष का भी खण्डन किया गया है कि बुद्ध ने धर्म का उपदेश नहीं किया। स्थविर वादी पूछता है कि, यदि बुद्ध ने धर्म का उपदेश नहीं किया तो फिर किसने किया। इसका उत्तर है कि 'अभिनिर्मित' ने धर्म देशना की और यह अभिनिर्मित 'आनन्द' था। सिद्धान्त बताते हुए सूत्रों से उद्धरण दिये गये हैं, जिनसे मालूम होता है कि बुद्ध ने स्वयं शारिपुत्र से कहा था कि मैं संक्षेप में भी और विस्तार से भी धर्म का उपदेश करता हूँ, इसलिए स्वीकार करना पड़ता है कि भगवान् बुद्ध ने स्वयं धर्म देशना की थी। हम ऊपर कह चुके हैं कि त्रिपिटक में ही बुद्ध के धर्म काय की सूचना मिलती है। बुद्ध ने स्वंय कहा है कि जो धर्म को देखता है वह मुझको देखता है और जो मुझ को देखता है, वह धर्म को देखता है।

धर्म-काय-:यह उन धमौं का समुदाय है जिनके प्रतिलाभ से एक आश्रय विशेष सर्व धर्म का ज्ञान प्राप्त कर बुद्ध कहलाता है। बुद्ध कारक धर्मः क्षयज्ञान,अनुत्पादज्ञान,सम्यक् दृष्टि है। इन ज्ञानों के परिवार अनाश्रव पंच स्कन्ध हैं। धर्म काय अनाश्रव धमौं की सन्तति है या आश्रय परि निर्वृत्ति है। यह पञ्चभाग या पञ्चाङ्ग धर्म काय कहलाता है। धर्म संग्रह (पृ 23) में इन्हें लोकोत्तर स्कन्ध कहा है, महाव्युत्पत्ति में असमसमस्कध है, इन्हें जिन स्कन्ध भी कहते हैं। यह दीघ निकाय (3 229, 4, 279) के धम्मक्खन्ध है। यह इस प्रकार हैं शील, समाधि, प्रज्ञा, विमुक्ति, विमुक्तिज्ञान दर्शन। बुद्ध की शरण में जाने का अर्थ है, धर्म काय की शरण में जाना, यह उनके रुपकाय की शरण में जाना नहीं है। भिक्षु की भिक्षुता, उनका संवरशील उसका धर्म-काय है। इसी प्रकार बुद्ध का बुद्धत्व, बुद्ध के अनास्राव-धर्म, उसके धर्म काय हैं। दीघनिकाय, (3, 84) में कहा है कि तथागत का यह धर्म काय श्रेष्ठ अधि वचन है। धर्म काय ब्रह्म काय है। यह धर्मभूत, ब्रह्मभूत भी है। भगवान् के फलसंपत् का लक्षण धर्म काय है। फलसंपत् चतुर्विध है। धर्म-काय की परिनिष्पित्ति से इनकी प्राप्ति होती है। चार संपत्तियाँ ये हैंः- ज्ञानसंपत्,प्रहाणसंपत, प्रभासंपत, रुपकायसंपत। प्रभावसंपत् बाह्य-विषय के निर्माण, परिणाम, और अधिष्ठान वशिता की संपत् है। अपूर्व बाह्य-संपत् का उत्पादन निर्माण है। पत्थर को सोना वना देना आदि परिणाम हैं। किसी विषय की दीर्घ कालतक अवस्थान कराने में सामर्थ अधिष्ठानवशिता है। प्रभावसंपत् के अर्न्तगत आयु के उत्सर्ग और अधिष्ठानवशिता की संपत् आवृत्त गमन, आकाशगमन,सदूर क्षिप्र गमन, अल्प में बहुका प्रवेश, विविध और स्वभाविक आश्चर्य धमौं की संपत् भी है। यह अन्तिम भगवत् का सहज प्रभाव है। बुद्धों की यह धर्मता है कि उनके चलने पर निम्नस्थल समतल हो जाता है, जो ऊँचा है, वह नीचा हो जाता है, जो नीचा है वह ऊँचा हो जाता है। अन्धे दृष्टि का, बहरे श्रोत का, उन्मत्त स्मृति का प्रति लाभ करते हैं।

यह धर्म काय अनित्य है और सब तथागतों द्वारा समान रुप से अधिकृत है। अष्टसाहस्रिका प्रज्ञापारमिता के अनुसार वास्तव में बुद्ध का यही शरीर है। रुपकाय सत्काय नहीं है। धर्मशरीर ही भूतार्थिक शरीर है। आर्यशालिस्तम्बसूत्र के अनुसार धर्म शरीर अनुत्तर है। वज्रच्छेदिका का

कहना है कि बुद्ध का ज्ञान धर्म द्वारा होता है, क्यों कि बुद्ध धर्म काय हैं पर धर्मता अविज्ञेय है। धर्म क्या है? आर्य शालिस्तम्बसूत्र के अनुसार प्रतीत्व समुत्पाद ही धर्म है। जो इस प्रतीत्यसमुत्पाद को यथावत् अविपरीत देखता है और जानता है कि यह अजात, अव्युपशम-स्वभाव है, वह धर्म को देखता है। यह प्रतीत्य समुत्पाद बुद्ध के मध्यम मार्ग का सार है। इस को भगवान्ने गम्भीर नय कहा है। "तत्वज्ञान"अधिगम के कारण ही बुद्धत्व की प्राप्ति होती हैं। 'तत्वज्ञान' को "धर्म" और "प्रज्ञा" दोनो कहते हैं। अतः कोई आक्ष्चर्य की बात नहीं है जो बुद्ध स्वभाव को "धर्म" और "प्रज्ञा" कहा गया है। अष्टसाहस्रिका में प्रज्ञापारमिता को बुद्ध का धर्म काय बताया है। प्रज्ञा को तथागतों की माता भी कहा हैं। यह धर्म काय रुपकाय के असदृश सर्वप्रपञ्च या आवरण से रहित और प्रभास्वर है। इसको "स्वभावकाय" भी कहते हैं। तत्वज्ञान से ही निर्वाण का अधिगम होता है, कहीं-कहीं धर्म काय को 'समाधिन्काय' भी कहा है। तत्वज्ञान या बोधि ही परमार्थ सत्य है। सांवृतिसत्य की दृष्टि से इसको शून्यता, तथता, भूतकोटि और धर्मधातु कहते हैं। सब पदार्थ निः स्वभाव अर्थात् शून्य है, न उनकी उत्पत्ति है और न निरोध । यही परमार्थ सत्य है। नागार्जून माध्यमिक्सूत्र में कहते हैंः-अप्रतीत्य समुत्पन्नो धर्मः कश्चिन्न विद्यते । यस्मात्तस्माद शून्यो ऽहि धर्मः कश्चिन्न विद्यते।।

(प्रकरण 24, श्लोक 19) जो प्रतीत्य समुत्पाद है वही शून्यता है अर्थात् स्वभाव से भावों का अनुत्पाद है। भगवान् कहते हैं-: यः प्रत्ययैर्जायति सह्म जातो न तस्य उत्पादु स्वभावतो ऽस्ति। यः प्रत्ययाधीनु स शून्य उक्तो यः शून्यतो जानति सो ऽप्रमत्तः।। अर्थात् जिसकी उत्पत्ति प्रत्यय वश है, वह अजात है, उसका उत्पाद स्वभाव से नहीं है। जो प्रत्यय के अधीन है, वह शून्य है। जो शून्यता को जानता है, वह प्रमाद नहीं करता। आचार्य नागार्जून कहते हैं कि तथागत का जो स्वभाव है वही स्वभाव इस जगत् का हु, जैसे तथागत निः स्वभाव है उसी प्रकार यह जगत् भी निः स्वभाव है। प्रज्ञापारमिता में कहा है कि सब धर्म मायोपम है, सम्यक् संबुद्ध भी मायोपम है, निर्वाण भी मायोपम है, माया और निर्वाण अद्वय है। तथागत अनास्रव-कुशल धर्म के प्रति बिम्ब हैं, न तथता है, न तथागत, सब लोको में बिम्ब ही दृश्यमान है। इन सब का आशय यही है कि शून्यतावादी के मत में बुद्ध निः स्वभाव हैं अर्थात् वस्तु निबन्धन से मुक्त हैं और परमार्थ सत्य की दृष्टि से तथागत और जगत का यही यथार्थ रुप है।

शुन्यता को विज्ञानवादी "वस्तुमात्र" मानते हैं और यह वस्तुमात्र "चित्त विज्ञान" या "आलय विज्ञान" है। जो कुछ है वह चित्त का ही आकार है। जगत् चित्तमात्र है। संसार और निर्वाण दोनो चित्त के धर्म हैं। विज्ञानवादी के अनुसार तथता, भूततथता, धर्मकाय, सत्यस्वभाव हैं। जब लक्षण युक्त हो जाता है तब उसे माया कहते हैं और जब वह अलक्षण है, तब वह शून्य के समान है। बुद्धत्व ही धर्म काय है क्यों कि बुद्धत्व विज्ञान की परिशुद्धि है। त्रिकाय स्तव नाम का एक छोटा स्तोत्र ग्रन्थ है। इस में स्रग्धरा के सोलह श्लोक हैं। नालन्दा के किसी भिक्षु ने सन् 1000 ईसवी, (विक्रम सं 1057) के लगभग इस स्तोत्र को चीनी अक्षरों में लिपिवद्ध किया था। फाहियान के चीनी लिपि में उसे लिखा था। विब्बती भाषा में इसका अनुवाद पाया जाता है। धर्ममाय ने सम्बन्ध का श्लोक यहाँ उद्दत किया जाता है।। इस श्लोक में धर्म काय की बडी सुन्दर व्याख्या की गयी है। अनुमान है कि त्रिकाय स्तव आचार्य नागार्जून का हैः-

यो नैको नाथनेको स्वपरहितमहासम्पदाधारभूतो नैवाभावो न भावः रवमिव समरसो निर्विभावस्वभावः। निर्लेपं निर्विकारं शिवमसमसमं व्यापिनं निष्प्रपञ्चं वन्दे प्रत्यात्मवेध्यं तमहमनुपमं धर्म कायं जिनानान्।।

"धर्म काय एक नहीं है, क्योंकि वह सबको व्याप्त करता है। और सबका आश्रव है, धर्मकाय

अनेक भी नहीं है क्योंकि वह समरत है। यह बुद्धत्व का आश्रय है। यह अरुप है। न इसका भाव, है न अभाव। आकाश के समान यह एक रस है, इसका स्वभाव अव्यक्त है, यह निर्लेप है, निर्विकार, अतुलय, सर्वव्यापी और प्रपञ्चरहित है। यह स्वसंवेध्य है। बुद्धों का ऐसा धर्म-काय अनुपम है।

तान्त्रिक ग्रन्थों में धर्म काय को वैरोचन, वज्रसत्व या आदि बुद्ध कहा है। यह धर्म काय बुद्ध का सर्वश्रेष्ठ काय है।

रुप काय या निर्माण कायः भगवान का जन्म लुम्बिनी वन में हुआ था। उनका जन्म जरायुज है औपपादुक नहीं। वह गर्भ में संप्रजन्य के साथ निवास करते हैं और संम्प्रजन्य के सहित गर्भ से वाहर आते हैं। औपपादुक योनि श्रेष्ठ समझी जाती है किन्तु बोधिसत्व जरायुज योनि पसन्द करते हैं। मरण पर औपपादुक अर्चि के सदृश विनष्ट हो जाता है। ऐसा होने पर उपासक धातु गर्भ की पूजा न कर सकते। इसलिए बोधिसत्व ने जरायुज योनि पसन्द की। महावस्तु के अनुसार यध्यपि बोधिसत्व की गर्भाव क्रान्ति होती है तथापि वह औपपादुक है। सर्वास्तिवादियो के अनुसार रुपकाय सास्राव है किन्तु महासांधिक और सौत्रान्तिकों का मत है कि बुद्ध का रुपकाय अनास्रव है। महासांधिक सूत्र का प्रमाण देते हैं। "तथागत लोक में समृद्ध होते हैं," वह लोक को अभिभूत कर विहार मरते हैं, वह लोक से उपलिप्त नहीं होते। (संयुत्त, 3, 140)। विभाषाकार इस मत का निराकरण करते हैं और यह सिद्ध करते हैं कि जन्मकाय सास्रव है। यदि अनास्रव होता तो अनुपमा में बुद्ध के प्रति काम राग उत्पन्न नहीं होता, अङ्गुलिमाल में द्वेषभाव उत्पन्न नहीं होता इत्यादि। वह कहते हैं कि सूत्र के पहलेभाग में जन्मकाय का उल्लेख है और जब सूत्र कहता है कि यह काय लौकिक धर्मों से उपलिप्त नहीं होता है तो उसकी अभिसंधि धर्म काय से है। भगवान् का रुपकाय अविध्या तृष्णा से निवृत्त है, अतः वह सास्राव है। बुद्ध का रुप काय निर्माण काय या निर्मित काय कहलाता है। सुवर्ण प्रभास में कहा है कि भगवान् न कृत्रिम हैं और न उत्पन्न होते हैं। केवल सत्वों के परिपाक के लिए निर्मित काय का दर्शन करते हैं। अस्थि और रुधिर रहित काय में धातु (अस्थि) की कहाँ सम्भावना हैं भगवान् में सर्षपमात्र भी धातु नहीं है। केवल सत्वों का हित करने के लिए वह उपाय कौशल द्वरा धातु का निर्माण करते हैं। वेतुल्यकों का यह विचार था कि बुद्ध संसार में जन्म नहीं लते,वह सदा तुषित लोक में निवास करते हैं पर संसार के हित के लिए निर्मित रुप मात्र लोक में भेजते हैं। सद्धर्मपुण्डरीक में एक स्थल पर तथागत मैत्रेय का संवाद है, जिसमे मैत्रेय पूछते हैं कि इन असंख्य बोधिसत्वों का जो पृथवी विवर से निकलते हैं, समुद्गम कहाँ से हुआ। उस समय जो सम्यक् सम्बुद्ध अन्य असंख्य लोक धातुओं से आए हुए थे, और शाक्य मुनि तथागत के निर्मित थे,और अन्य लोक धातुओं में धर्म का उपदेश करते थे। यहाँ अन्य लोक धातु के तथागतों को शाक्य मुनि तथागत का निर्मित कहा है अर्थात् वह उनकी लीला या माया मात्र है। कथा वत्थु में भी इस मत का उल्लेख पाया जाता है। दिव्यावदान में हम "बुद्ध निर्माण" और निर्मित का प्रयोग पाते हैं। प्रतिहार्य सूत्रावदान में यह कथा वर्णित है कि एक समय भगवान् राजगृह में विहार करते थे। उससमय पूरण कश्यप आदि छः तीर्थिक राजगृह में एकत्र हो कहने लगे कि जब से श्रमण गौतम का लोक में उत्पाद हुआ है तब से हम लोगों का लाभ सत्कार सर्वथा समुच्छिन्न हो गया है। हम लोग ऋद्धिमान् और ज्ञानवादी हैं श्रमण गौतम अपने को ऐसा सम्झते हैं। उनको चाहिये कि हमारे साथ ऋद्धि प्रतिहार्य दिखलायें जितने ऋद्धि प्रति हार्य वह दिखलाये गें उसके दुगेने हम दिखलायें गे। भगवान् विचारा अतीत बुद्धों ने किस स्थान पर प्राणियों के हित केलिए महाप्रतिहार्य दिखलाया था। उनको ज्ञात हुआ कि श्रावस्ती में। तब वह भिक्षु संघ के साथ श्रावस्ती गए। तीर्थि कों ने राजा प्रसेन जित् से प्रार्थना की कि आप श्रमण गौतम से प्रति हार्य दिखलाने को कहें। राजा ने बुद्ध से निवेदन किया। बुद्ध ने कहा मेरी तो शिक्षा यह है कि कल्याण को छिपाओ और पाप को प्रकट करों। बुद्ध ने प्रेसन जित् से कहा किः आज से सातवें

दिन तथागत सबके समक्ष महाप्रतिहार्य दिखलायेगें। जेतवन में एक मण्डप बनाया गया और तीर्थिकों को सूचना दी गयी। भगवान् मण्डप में आये। भगवान् के काय से रश्मियाँ निकली और उन्हों ने समस्त मण्डप को सुवर्णवर्ण की कान्ति से अवभासित किया। भगवान् ने अनेक प्रातिहार्य दिखलाकर महाप्रति हार्य दिखलाया। ब्रह्मदि देवता भगवान् की तीन बार प्रदक्षिणा कर भगवान् के दक्षिण ओर और शक्रादि देवता बाई ओर बैठ गये। नन्द,उपनन्द, नागराजाओं ने शकट चक्र के परिमाण का सहस्र दल सुवर्ण कमल सुवर्ण कमल निर्मित किया। भगवान् पद्मकर्णि का में पर्यङ्क बद्ध बैठ गये अैर पदम के उपर दूसरा पदम निर्मित किया। उस पर भी भगवान् पर्यङ्क बद्ध हो बैठे दिखाई पड़े। इस प्रकार भगवान् ने बुद्ध पिंडी अकनिष्ठभवन निर्मित की। कुछ बुद्ध निर्माण शय्यासीनथे, कुछ, खड़े, थे, कुछ प्रातिहार्य करते थे और कुछ प्रश्न पूछते थे। राजा ने तीर्थिकों से कहा कि तुम भी ऋद्धि प्राति हार्य दिखलाओ। पर वे चुप रह गए और एक दूसरे को तुम उठो, तुम, उठो कहने लगे, पर कोई भी नहीं उठा। पूरण कश्यप को इतना दुख हुआ कि वह लगे में बालुकाघट बाँधकर शीत पुष्करिणी में कूद पड़ा और मर गया। इस कथा से ज्ञात होता है कि बुद्ध प्राति हार्य द्वारा अनेक बुद्धों की सृष्टि कर लेते थे। इनको 'बुद्ध निर्माण' कहा हे। तथागत की यह धर्मता है कि महा प्रातिहार्य करने के पश्रात् वह अपनी माता माया को अभिधर्म का उपदेश करने के लिए स्वर्गलोक को जाते हैं। उनको प्रतिदिन भिक्षा के लिए मर्त्यलोक में जाना पड़ता था। इसलिए अपनी अनुपस्थिति में शिक्षा देने के लिए उन्होने अपना प्रतिरुप निर्मित किया था। वर्षा में भगवान स्वर्ग में रहे। भगवान् का सांकाश्य के समीप स्वर्गलोक से अवतरण हुआ। यहाँ सब बुद्ध स्वर्ग से उतरते हैं। बुद्ध अनेक प्रकार का रुप सर्वत्र धारण कर कसते थे हैं। इसलिए निर्माण काय को 'सर्वत्रग' कहा है। त्रिकायस्तव में कहा है कि सत्वों के परिपाक के लिए बुद्ध अनेक रुप धारण करते हैं। शून्य और प्रकृति प्रभास्वर विज्ञान धर्म काय है। निर्माण काय इस धर्म काय के असत्रुप है।।

सम्भोग कायः धर्म काय और निर्माण काय के अतिरिक्त एक और काय की भी कल्पना की गयी है, यह है 'सम्भोग'-काय' इसे 'विपाक काय' भी कहते हैं। स्थविरवादियों के ग्रन्थों में संम्भोग काय की कोई सूचना नहीं मिलती। सौत्रान्तिक धर्म काय और सम्भोग काय दोनो को मानते थे। सम्भोग काय वह काय है जिसको बुद्ध दूसरों के कल्याण के लिये बोधिसत्व के रुप में अपने पुण्य संभार के फल स्वरुप तब तक धारण करते हैं जब तक निर्वाण में प्रवेश नहीं करते। महायान ग्रन्थों में हम बार बार इसविचार का उल्लेख पाते हैं कि बुद्धत्व, ज्ञान संभार और पुण्य संभार का फल है। महायान ग्रन्थों में ऐसे बुद्धों की सूचना मिलती है जो शून्यता में प्रवेश नहीं करते,जो दूसरों का कल्याण चाहते हैं और जो सबको सुखी करने के लिए ही बुद्धत्व की आकांक्षा करते हैं। सुखावती व्यूह में वर्णित है कि धर्मा कार भिक्षु ने ऐसे ही प्राणिधान का अनुष्ठान किया था और सुखावती लोक उनका बुद्ध क्षेत्र हुआ। वहाँ अमिताभ नाम के बुद्ध निवास करते हैं। भगवान के मुख से धर्म काय भिक्षु की प्रणिधान सम्पत्ति को सुनकर आनन्द बोलेः क्या धर्माकार भिक्षु सम्यक् संबोधि प्राप्त कर परिनिर्वाण में प्रवेश कर गये अथवा अभि संवोधि को प्राप्त नहीं हुए अथवा अभि वर्तमान है और धर्म देशना करते हैं? भगवान् बोलेः वह न अतीत और न अनागत बुद्ध हैं। वह इस समय वर्तमान हैं। सुखावती लोकधातु में अमिताभ नाम के तथागत धर्मदिशना करते हैं। उनके बुद्ध क्षेत्र की सम्पत्ति अनन्त है। उसकी प्रतिभा अमित है, उसकी इयत्ता का प्रमाण नहीं है। अनेक बोधि सत्व अमिताभ का दर्शन करने, उनसे परिप्रश्न करने तथा वहाँ के बोधि सत्व गण और बुद्ध क्षेत्र के गुणालङ्कार व्यूह को देखने सुखावती जाते हैं। बुद्ध अपने पुण्य राशि से यहाँ शोभित हैं। अमिताभ के पार्षद अविलोकितश्वर और महास्थान प्राप्त है। अमिताभ के नाम श्रवण से ही जिनको चित्त उत्पन्न होता है, जो श्रद्धावान् हैं, जिन में संशय और विचिकत्सा नहीं है। जो

अमिताभ का नाम किर्तन करते हैं वे सुखावती में जन्म लते हैं। अमिताभ बुद्ध का सम्भोग काय है। यह सुकृत का फल है जैसा त्रिकाय स्तव में कहा हैः

लोकातीतामचिंन्त्यां सुकृत शतफलामात्मनोयो विभूतिं पर्षन्मध्ये विचित्रां प्रथयति महतीं धीमतीं प्रीति हे तोः। बुद्धानं सर्वलोक प्रसृत-मविरतो दारसद्धर्मघोषं बन्दे सम्भोगकायं तमह मिह महाधर्मराज्य प्रतिष्ठम्।।

भगवान इस काय के द्वारा अपनी विभूति को प्रकट करते हैं। धर्म काय के असदृश यह काय 'रुपवान' है पर यह रुप अपार्थिव है। चन्द्रकीर्ति सम्भोग काय के लिये रुपकाय का प्रयोग करते हैं और उनकी तुलना धर्मकाय से करते हैं। मध्यमकावतार की टीका में कहते है कि ज्ञान संभार अर्थात् ध्यान और प्रज्ञा से धर्म काय होता हैः जिसका लक्षण अनुत्पाद है और पुण्य-संभार रुप काय का हेतु है। इस 'रुपकाय' को 'नाना रुप-वाला' कहा है कयों कि संभोग काय अपने को अनेक रुपों में 'निर्माण काय' प्रकट करने की शक्ति रखता है। बोधिचर्यावतार (पृ 323) में संभोग काय को लोकोत्तरकाय कहा है। चीन के बौद्ध साहित्य में भी हम त्रिकाय का उल्लेख पाते हैं। इस साहित्य के अनुसार त्रिकाय बुद्ध के इन तीन रुपों का भी सूचक हैः

1 शाक्यमुनि (मानुषीबुद्ध), जिसका इस लोक में उत्पाद हुआ। यह कामधातु में निवास करते हैं। यही निर्माणकाय है।

2 लोचन यह ध्यानी बोधिसत्व है। यह रुपधातु में निवास करते हैं। यह संभोग काय है।

3 बैरोचन या ध्यानी बुद्ध यह धर्म काय है। यह अरुप धातु में निवास करते हैं।

संक्षेप में कहां जाय तो बुद्धत्व की दृष्टि से त्रिकाय की व्याख्या इस प्रकार होगी। बुद्ध का स्वभाव,बोधि या प्रज्ञापारमिता या धर्म है। यही पर मार्थ सत्य है। इस ज्ञान संभार के लाभ से निर्वाण का अधिगम होता है। इसीलिए धर्म काय निर्वाण स्थित या निर्वाण सदृश समाधि की अवस्था में स्थित बुद्ध हैं। बुद्ध जब तक निर्वाण में प्रवेश नहीं करते तब तक लोक कल्याण के लिये वह पुण्य संभार के फल स्वरुप अपना दिव्य रुप सुखावती या तुषित लोक में बोधिसत्वों को दिखलाते हैं। यह संभोग काय है। मानुषी बुद्ध इन के निर्माण काय हैं जो समय समय पर संसार में धर्म की प्रतिष्ठा के लिए आते हैं।

दार्शनिक दृष्टि से धर्म काय शून्यता है या अवक्षण विज्ञान है। संभोग काय धर्म काय का सत्, चित, आनन्द या करुणा के रुप में विकास मात्र है। यही चित् जब दूषित हो कर पृथक् जन के रुप में विकसित होता है तब वह निर्वाण काय कहलाता है। त्रिकाय की कल्पना हिन्दू धर्म में नहीं पायी जाती। पर यदि सूक्ष्म रुप से विचार किया जाय तो विदित होगा कि वेदान्त का परब्रह्म, विष्णु और विष्णु के मानुषी अवतार (जैसे-:राम, कृष्ण) क्रमशः धर्म काय, संभोगकाय, और निर्माण काय के समान हैं। जिस प्रकार बौद्धग्रन्थों में धर्म काय को निर्लेप,निर्विकार,अतुल्य, सर्वव्यापी और प्रपंच रहित कहा है उसी प्रकार उपनिषदों में ब्रह्म को अग्राह्य, अलक्षण,अचिन्त्य, शान्त, शिव, प्रपञ्चोपशम,निर्गुण, निष्क्रिय, निर्विकल्प, और निरञ्जन कहा है। दोनो मन और वाणी के विषय नहीं है। और दोनो के स्वरुप का निरुपण नहीं हो सकता। जिस प्रकार विष्णु करुणा के रुप हैं उसी प्रकार बुद्ध भी करुणा के रुप हैं। पुराणों में तथा श्री रामानुजाचार्य रचित श्री बैकुण्ठ गध्य में विष्णु लोक का जो वर्णन मिलता है उसकी तुलना सुखवती लोक के वर्णन से करने पर कई बातों में समानता पायी जाती है। दोनो लोक दिव्य है और प्रचुर दिव्य संपत्ति से समन्वागत है। दोनो लोकों में सब वस्तु इच्छा मात्र से सुलभ है दोनो का तेज अनन्त है। विष्णु और अमिताभ परिजनो से परिवृत्त हैं। अनन्य भक्ति द्वारा ही दोनो लोकों की प्राप्ति होती है। दोनो विशुद्ध सत्व से निर्मित हैं। अतः दोनो ज्ञान और आनन्द के वर्धक हैं। दोनो अत्यद्भूत वस्तु हैं। जिस प्रकार

मानुषी बुद्ध संभोग काय के निर्माण काय हैं। इसी प्रकार राम कृष्ण आदि विष्णु के अवतार हैं। वे धर्म की स्थापना के लिए संसार में समय समय पर आते हैं।

ईसाई धर्मः में ईसा के व्यक्तित्व के बारे में कुछ इसी प्रकार के विचार पाये जाते हैं। ईसाईयों में भी कुछ मत ऐसे प्रकट हुए, जो यह शिक्षा देते थे कि इसा का पार्थिव शरीर न था, वह माता के गर्भ से उत्पन्न नहीं हुए थे, देखने में ही वह मनुष्य मालूम होते थे, यह उनका माया निर्मित शरीर था। वे उनके लोक में उत्पाद तथा उनके मृत्यु को एक सत्य घटना नहीं मानते थे। इन में कुछ ऐसे भी थे जो ईसा के शरीर का अस्तित्व तो मानते थे पर उसको पार्थिव न मान कर दिव्य मानते थे और उनका यह विश्वास था कि ईसा सुख और दुख के अधीन न थे। इस प्रकार के विचारों को 'डोसेटिज्म' (डोसेटिज्म) कहते हैं।।

पारसियों के अवेस्ता में जिन चार स्वर्गों का उल्लेख है उनमें से एक का नाम अनन्त 'प्रभावाला' है। जैनियों का सत्पुर भी सुखावती लोक से मिलता जुलता है।

"इति" भवतु सब्ब मंगलम्।।

## परिशिष्ट

1 अङ्गुत्तर निकाय भाग 2, चतुक्कनिपात चक्कवग्ग, पृ 38।,

2 अङ्गुत्तर निकाय भाग 2, पृष्ठ 12, महापदान सुत्त।,

3 दीघ निकाय भाग 2, पृष्ठ 16।,

4 दीघ निकाय भाग 3, पृष्ठ 134।,

5 दीघ निकाय भाग 2, पृष्ठ 154, महापरिनिब्बान सुत्त।,

6 इतिवुत्तक वग्ग 5, सुत्त 3, पृष्ठ 91।,

7 संयुक्त निकाय भाग 3, पृष्ठ 120।,

8 एवमे हं लोक पिता स्वयंभूः चिकित्सकः सर्वप्रज्ञान नाथः विपरीत मूदांश्च विदित्व बालान् अनि वृत्तो निर्वृत दर्शयामि।। 2।। सद्धर्म पुण्डरीक पृ, 326

9 अचिन्तिया कल्पसहस्रकोटयो यासां प्रमाणं न कदाचि विध्यते। प्राप्ता मया एव तदाग्र बोधि धर्मं चदेशेम्यहु नित्य कालम्।।

सद्धर्म पुण्डरीक, पृ 326।,

10 सद्धर्म पुण्डरीक, पृष्ठ 323-324।,।

11 आकांक्षन्नानन्द तथागत एक पिण्डपातेन कल्पं वा तिष्ठेत् कल्पसहस्रं वा कल्प शत सहस्रं वा यावत् कल्पकोटी न्ययुतशतसहस्रं वा ततो वोत्तरि तिष्ठेत् न च तथागत स्येन्द्रियाणयुपनश्येयु र्नमुखवर्णस्यान्यथात्वं भवेन्नापि च्छविवर्ण उपहन्येत। सुखावतीव्यूह, पृष्ठ 4।,

12 अष्टसाहस्रिका प्रज्ञा प्रारमिता, पृष्ठ 94।,

13 धर्मतो बुद्धा द्रष्टव्या धर्म काया हि नायकाः धर्मता चाप्यविज्ञेया न सा शक्या विजानितुम।। बज्रच्छेदिका, पृष्ठ 43।,

14 यदुक्तं भगवता धर्मस्वामिना सर्वज्ञेन यो भिक्षवः प्रतीत्य समुत्पादं पस्यति स धर्मं पस्यति यो धर्मं पस्यति स बुद्धं पस्यति यो धर्म पस्यति स बुद्धं पस्यति य इमं प्रतीत्य समुत्पादं सतसतमितं निर्जीवं यथावद विपरीतम जातम भूतमसंस्कृतं प्रतिघमनालम्बनं शिवमभय महार्य मच्युपशम स्वभावं पस्यति स धर्मं पस्यति। सो नुत्तरं धर्मशरीरं बुद्धं पस्यति। बोधिचर्यावतार पञ्जिका, पृ 386।

15 सर्वप्रपञ्चव्यतिरिक्टो भगवतः स्वाभाविको धर्म कायः स एव चाधिगमस्वभावो धर्मः बोधिचर्यावतार पञ्जिका, पृष्ठ 31।,

16 बोधिबुद्धत्वमेकानेक स्वभाव विविक्ट मनुत्पन्न निरुद्धम नुच्छेदमशाश्वखतं सर्व प्रपञ्चविनिर्मुत्ममाकाश प्रति समंधर्मकायारव्यं परमार्थतत्व मुच्यते। एतदेव च प्रज्ञापारमिता शून्यता तथता भूत कोटि धर्मधात्वादिशब्देन संवृत्तिमुपादायाभिधीयते। बोधिचर्यावतार पञ्जिकार, अ 9 श्वो 38।,

17 निवृत्तमभिधतव्यं निवृत्ते चित्तगोचरे। अनुतपन्ना निरुद्ध हि निर्वाणमिव धर्मता। माध्यममिकवृत्ति, पृ 164।,

18 शून्यता सर्वदृष्टीनां प्रोक्ता निः सरणं जिनैः येषां तु शून्यता दृष्टिस्तानसाध्यान् बभाषिरे।। माध्यमिकसूत्र, 13। 8।।

19 माध्यमिकसूत्र, 22, 15, 16।,

20 माध्यमिकपृत्ति, पृ 449।,

21 सद्धर्मपुण्डरीका, पृ 307।,

22 मध्यमावतार टीका, पृ 62- 63।,

23 हेण्डबुक आफ चायनिज् बुद्धिज्म अर्नेस्टले एरिटेल, पृ 178, पृ 3।,।

24 अदृष्टमव्य वहार्य मग्राह्य मलक्षणमचिन्त्य मव्यपदेश्यमेकात्म प्रत्ययसारं प्रपञ्चोपशमं शान्तं शिवद्वैतं चतुर्थं मन्यन्तेस आत्मा स विज्ञेयः माण्डूक्योपनिषत्।।

25 निर्गुणं निष्क्रियं सूक्ष्मं निर्विकल्पं निरञ्जनम्। अनिरुप्य स्वरुपं यन्मनो वाचामगोचरम्।।आत्मा त्मोपनिषत्।।

26 तस्मिन् बन्धविनिर्मुक्ता प्राप्यन्ते सुसखंपदम्। यं प्राण्य न निवर्तन्ते तस्मात् भोक्ष उदाहृतः।।पद्मपुराण, उत्तर खण्ड, 29 अध्याय।,

27 इलियट हिन्दुइज्म एण्ड बुद्धिज्म, भाग 2 पृष्ठ 2 8-2 9।,।

28- N.Dutt=Mahayana Buddhism p-238-289.

29- D.T.Suzuki= out lines of Mahayana Buddhism.

30- Lalahar Dayal=Bodhisatta.

31- Macgovern= An Introduction to Mahayana Buddhism.

32 दयोगाचार आइडियलिज्म

33 मिलिन्द प्रश्न।

34 द सेण्ट्रल फिलसफी ऑव् बुद्धिज्म प्रो.टी.आर.वी.मूर्ति।.

35 तत्व संग्रह पंजिका

36 बुद्धिस्ट लॉजिक प्रो. श्चेरवात्सकी।.

37 प्रमाणवार्तिक।